पुण्यभूमि भारत संस्कृति वाचनमाला ◆ संपुट-७ ◆ क्रमांक-२ ◆ वर्ग-३

पंचांग

भाग-१

मू. ले. : जरशा

अनुवाद : वासुदेव प्रजापति

पुनरुत्थान ट्रस्ट

पुण्यभूमि भारत संस्कृति वाचनमाला

संपुट - ७
क्रमांक - २ ◆ वर्ग - ३

प्रकाशक
पुनरुत्थान प्रकाशन सेवा ट्रस्ट
'ज्ञानम' ९बी, आनंदपार्क,
बलियाकाका मार्ग,
जूना ढोर बजार, कांकरिया,
अहमदाबाद -३८० ०२८
दूरभाष : (०७९) २५३२२६५५

मू. ले. : जरशा

अनुवाद : वासुदेव प्रजापति

मुखपृष्ठ एवं चित्रांकन
अजित वाघेला

मुद्रक : साधना मुद्रणालय ट्रस्ट
५५/१४, सिटी मिल कम्पाउण्ड,
रायपुर दरवाजा के बाहर,
कांकरिया मार्ग,
अहमदाबाद -३८० ०२२

प्रकाशन तिथि
आषाढ शु. १५
युगाब्द ५११२
२५ जुलाई २०१०

प्रति : २०००

मूल्य : २०/-

प्रस्तावना....

भारतीय संस्कृति विश्व में सर्वाधिक प्राचीन एवं सर्वश्रेष्ठ है । परन्तु संस्कृति तभी सुरक्षित रहती है जब उसकी परम्परा पीढ़ी दर पीढ़ी हस्तान्तरित होती रहती है । हर नयी पीढ़ी को अपनी संस्कृति का परिचय प्राप्त होना आवश्यक होता है । हर नयी पीढ़ी का मानस संस्कृति के सत्त्वसे सिंचित होना आवश्यक होता है । संस्कृति का हस्तान्तरण शिशु अवस्था से ही घर में और विद्यालय में होना चाहिये। संस्कृति के केवल गुणगान करना पर्याप्त नहीं होता । कृति में, व्यवस्था में, विचारों में और वातावरण में उसका होना आवश्यक होता है ।

इन बातों का विचार कर पुनरुत्थान ट्रस्ट ने इस पुण्यभूमि भारत संस्कृति वाचनमाला के प्रकाशन का विचार किया है ।

आजकल लोग कहते हैं कि संचार माध्यमों के प्रभाव के कारण से छोटे बडे सभी की पढ़ने की वृत्ति और प्रवृत्ति बहुत कम रह गई है । परन्तु अनुभव और अनुमान कहता है कि अन्ततोगत्वा पुस्तकों का स्थान अन्य माध्यम नहीं ले सकते । सौन्दर्यबोध, कल्पनाशक्ति और रसग्रहण के विषय में पुस्तकें सर्वाधिक लाभकारी होती हैं ।

अतः आज परिस्थिति विपरीत प्रतीत होने पर भी मातापिता और शिक्षकगण छोटे छात्रों को इन पुस्तिकाओं को पढ़ने हेतु प्रेरित करें एवं उन्हें सहायता करें यही अपेक्षा है ।

पुस्तिकाओं के विषय देखकर प्रतीत होगा कि न केवल छोटे अपितु बडे छात्रों के लिये, और न केवल छात्रों अपितु उनके मातापिता और आचार्यों के लिये भी ये उपयोगी सिद्ध होंगी ।

वाचनमाला के विषय में आपके सुझाव अवश्य भेजें यही विनम्र निवेदन है ।

इति शुभम् ।

प्रकाशक

१ कालान्तर

तनिक विचार करके देखो !

आप पर्वत के शिखर पर बने महल में खा-पीकर मौज कर रहे हैं, परन्तु वहाँ वार, दिनांक, महीना और वर्ष जानने के लिए कोई भी साधन नहीं है । सूरज उगता है तो उजाला होता है और अस्त होता है तो उजाला चला जाता है और अंधेरा छा जाता है । फिर से सूर्य उगता है तब तुम्हें दूसरा दिन होने की जानकारी तो होती है परन्तु आज किस वर्ष का कौनसा महीना, किस माह की कौनसी तारीख तथा सप्ताह का कौनसा वार है, इसकी जानकारी कैसे होगी ? क्या आप केवल दिनों की ही गिनती करेंगे ?

यदि विश्व में सात वार और बारह महीनों के नाम ही न हों तथा सप्ताह, महीना या वर्ष की व्यवस्था ही न हो तो आज हमारा जो व्यवहार होता है वह कैसे चल पायेगा ? शाला में ग्रीष्मावकाश कब रखना, रेल का आरक्षण कब रखना तथा नौकरी करने वालों को वेतन किस दिन देना आदि अनेक बातें व्यवहार में किस प्रकार सम्भव होतीं ?

समय तो सदैव गतिमान ही रहता है । और हम सब काल के प्रवाह में बहते बहते एक मिनट से दूसरे मिनट में, एक घंटे से दूसरे घंटे में, एक दिन से दूसरे दिन में, इसी प्रकार एक सप्ताह, महीना या वर्ष से दूसरे सप्ताह, महीने या वर्ष में आ जाते हैं ।

एक ग्राम से दूसरे ग्राम जाना ग्रामान्तर कहलाता है ।

एक देश से दूसरे देश जाना देशान्तर कहलाता है ।

एक भव से मरकर दूसरे भव में जन्म लेना भवान्तर कहलाता है ।

इसी प्रकार एक काल से दूसरे काल में अथवा काल के एक भाग से दूसरे भाग में जाना 'कालान्तर' कहलाता है ।

२ राजा रोम्युलस और न्यूमा पोम्पीलीअस का सौर केलेण्डर

'कालान्तर' शब्द मूलतः संस्कृत भाषा का है। 'एक काल से दूसरे काल में जाना' यह जिस प्रकार कालान्तर कहलाता है, ठीक उसी प्रकार काल में होने वाले परिवर्तन की जानकारी भी 'कालान्तर' कहलाती है।

भारत वर्ष का खगोलशास्त्र का ज्ञान अरबस्तान से होकर यूरोप के ग्रीस, रोम आदि देशों तक पहुँचा तब उच्चारण की कठिनाई खड़ी हुई। यूरोप के अनेक प्रदेशों की भाषा में 'त', 'ट', 'ड' आदि वर्णों के उच्चारण होते ही नहीं। इसलिए उन्हें 'त', 'ट' या 'ड' बोलना आता ही नहीं। हम कालान्तर बोलते हैं, तो वे ठीक सुनते हैं परन्तु बोलते समय 'कालान्तर' का 'कालान्दर' जैसा उच्चारण ही कर पाते हैं। क्योंकि 'त' 'ट' या 'ड' के स्थान पर वे 'द' ही बोल पाते हैं। अब यह कालान्दर यूरोप की दूसरी भाषाओं वाले प्रदेशों में पहुँचते पहुँचते और इसमें थोड़ा बहुत बदल होते होते 'केलेण्डर' हो गया।

राजा रोम्युलस

यूरोपीय केलेण्डर केवल सूर्य की गति के गणितीय आधार पर ही चलते हैं। इसलिए खगोलशास्त्र की भाषा में इसे 'सौर केलेण्डर' कहते हैं। यूरोप में सौर केलेण्डर पद्धति का प्रारम्भ ईसा

पूर्व से ही हो गया था ।

सूर्य की गति का गणितीय ज्ञान न होने के कारण इसके प्रारम्भ में केलेण्डर यथार्थ से परे थे । वर्ष के महीने कितने और वर्ष तथा मास के दिन कितने इसकी भी समझ इन्हें नहीं थी । रोम शहर के स्थापक रोम्युलस ने ईसा से ७५० वर्ष पहले कालगणना के अन्तर्गत वर्ष के तीन सौ चार दिन निश्चित किये तथा इन्हें दस महीनों में बराबर बराबर बाँटें । दस में से छः महीने तीस तीस दिन के और चार महीने इकत्तीस इकत्तीस दिन के थे ।

कालगणना की यह पद्धति लोगों को जँची नहीं । उसके बाद ईसा पूर्व ७१६ से ६७३ के बीच में रोमन राजा न्यूमा पोम्पीलीअस ने दो नये महीने जान्युआरी और फेब्रुआरी बनाये । उस समय उसने जान्युआरी को वर्ष का पहला और फेब्रुआरी को वर्ष का बारहवाँ महीना बनाया । बाद में ईसा पूर्व १५३ में इसमें परिवर्तन कर फेब्रुआरी को दूसरे महीने के रूप में गणना करन लगे । इसलिए पूर्व के दस महीनों का क्रम बदलकर तीसरे से बारहवाँ हो गया । सातवें, आठवें, नौवें, दसवें स्थान के सप्टेम्बर, ऑक्टोबर, नवम्बर, डिसेम्बर क्रम से नौवें, दसवें, ग्यारहवें और बारहवें स्थान पर धकेल दिये गये ।

जूनो

वर्ष तीन सौ पचपन दिनों का बनाया । और जान्युआरी से डिसेम्बर तक के महीनों के दिनों की संख्या क्रम से २९, २८, ३१, २९, ३१, २९, ३१, २९, २९, ३१, २९

और २९ रखी । महीनों के नाम भी काल के प्रवाह के साथ देव देवियों और राजाओं के नाम पर रखे गये ।

जेनस देव के नाम से जान्युआरी नाम हुआ । फेब्रुआ देवी के नाम से फेब्रुआरी हुआ । एपेरियो (खिलना) से बना एप्रिल ।

वनस्पति की वृद्धि जिस माह में होती है, वह मग् (वृद्धि पाना) से बना मई ।

जूनो से बना जून । जुलियस सीझर का जन्म जिस माह में हुआ वह बन गया जुलाई ।

जेनस

ओगस्टस सीझर के नाम हुआ ऑगस्ट । सप्टेम्बर (सप्त + अम्बर), ऑक्टोबर (अष्ट + अम्बर), नवेम्बर (नव + अम्बर) तथा डिसेम्बर (डिस = दस + अम्बर) ये मूल संस्कृत शब्द यूरोपीय केलेण्डर में यथावत् रह गये ।

तीन सौ पचपन दिनों का वर्ष छोटा पड़ने से राजा न्यूमा के आदेश से प्रत्येक दूसरे वर्ष एक माह अधिक अर्थात् तेरहवाँ महीना डाला गया । और चार वर्षों में दो अधिक माह में से एक माह बाइस दिन का तथा दूसरा माह तेइस दिन का रखा गया । इस प्रकार चार वर्ष के कुल १४६५ दिन हो जाने से चौथे वर्ष में चार दिन बढ़ गये । चौबीस वर्षों के पश्चात् यह भूल ध्यान में आई कि वर्ष में चौबीस दिन बढ़ गये हैं । न्यूमा के आदेश से फिर

जुलिअस सीझर

इसमें परिवर्तन हुआ । हर चौबीस वर्ष में पिछले आठ वर्षों में बचे हुए चार महीनों के स्थान पर बचे हुए तीन महीने ही रखना और उन तीन महीनों के बाइस बाइस दिन रखना । बचे हुए ये तीनों महीनें प्रत्येक चौबीस वर्ष में से पिछले आठ वर्ष में से कौन कौन से वर्ष रखना यह तय करने का काम धर्मगुरुओं को सौंपा गया । धर्मगुरुओं ने कभी कोर्ट की समय सीमा बढ़ाने के लिए अचानक अधिक हुआ मास लगा दिया और कभी अधिक मास लगाने के स्थान पर पहले छँटनी करने के लिए वह महीना लगाना बंद कर दिया । ईसा पूर्व ४६ में जुलियस सीझर ने चले आ रहे चान्द्र पंचांग को हटाकर सौर पंचांग लागू किया ।

बिना किसी ठोस आधार के यूरोपीय सौर केलेण्डर में भारी मात्रा में गड़बड़ियाँ होती रहीं । राजाओं के बारबार के आदेशों के कारण होने वाले परिवर्तनों से त्यौहार जब चाहे तब अर्थात् अलग अलग ऋतुओं में आने लगे । ऐसे घोटाले लगभग ई.स. १५०० तक अर्थात् १५०० वर्षों तक चलते रहे ।

३ पोप ग्रेगरी और इग्लैण्ड की पार्लियामेन्ट

लगभग बाईस–तेईस सदियों तक चलते रहे घोटालों में सुधार करने पर भी यूरोपीय कैलेण्डर में दोष रहने लगे। यूरोप में पोप ग्रेगरी के समय में, ई.स. १५८२ के वर्ष में गणना में दस दिन की भूल रह गई थी, यह ध्यान में आया। पोप ने ४ अक्टूबर १८८३ के दिन एक विचित्र आदेश दिया, 'आने वाले दिन को पाँच अक्टूबर के स्थान पर पन्द्रह अक्टूबर गिनना।' बीच की तारीखें उड़ा दी गईं। बड़ा विचित्र निर्णय लगता है ना ! हमारे वर्तमान कैलेण्डरों में पाँच अक्टूबर से १४ अक्टूबर तक की तारीखें न हों तो कैसा लगेगा ?

इस विचित्र निर्णय की पुनरावृत्ति एक सौ सत्तर वर्ष बाद ब्रिटेन की पार्लियामेन्ट ने की। ईंग्लैण्ड में ग्यारह दिनों की भूल को सुधारने के लिए सितम्बर की दूसरी तारीख के बाद नये दिन को तीसरी सितम्बर के स्थान पर चौहदवीं तारीख गिनने का आदेश पार्लियामेन्ट ने जारी किया। यह उनकी अकुशलता में से पैदा हुई लाचारी थी। और फिर अभी कुछ वर्ष पूर्व २५ मार्च को यूरोपीय सौर वर्ष का प्रारम्भ होता था। उसमें परिवर्तन कर जनवरी की पहली तारीख से वर्ष का प्रारम्भ करने का आदेश भी साथ साथ दिया गया।

ये सब अटपटी बातें समझ में नहीं आती हैं तो कोई आपत्ति नहीं। परन्तु इतना अवश्य समझ में आना चाहिए कि यूरोप के विभिन्न भागों में भी एक जैसा सौर केलेण्डर नहीं चलता। अकुशलता के घोटाले सदियों तक चलते रहे थे। और विश्व के बहुत बड़े भाग के प्रदेशों पर ब्रिटेन का आधिपत्य होने के कारण पूरे विश्व में क्रमशः एक जैसी सौर कैलेण्डर पद्धति व्यवहार में अपनाई गई होगी। यूरोप में किसी समय में अप्रैल महीना वर्ष का पहला महीना गिना जाता रहा होगा, इसीलिए आज भी विश्व भर में लेखा वर्ष १ अप्रेल से ३१ मार्च तक गिना जाता है।

४ कालगणना की विविध परम्पराएँ

सामान्य तथा सौर केलेण्डर का महीना ३० और लगभग आधा अर्थात् लगभग ३०$^{१}/_{२}$ दिनों का होता है । और १ सौर वर्ष का समय तीन सौ पैंसठ दिन और लगभग छः घण्टों (छः घण्टों पर कुछ मिनट व सैकण्ड अधिक) अर्थात् लगभग ३६५$^{१}/_{४}$ दिन (३६५ दिन, १५ घड़ी, ३१ पल व २८ विपल) का होता है । जनवरी से लेकर दिसम्बर तक के महीनों में दिनों का क्रम ३१, २८, ३१, ३०, ३१, ३०, ३१, ३१, ३०, ३१, ३० और ३१ निश्चित कर दिया है । आज तीन सौ पैंसठ दिन का सौर वर्ष चलता है । उपर के छः घण्टों को समायोजित करने के लिए ६ x ४ = २४ घण्टों का एक दिन गिनकर प्रत्येक चौथे वर्ष में फरवरी माह में २९वीं तारीख डाली गई है । और इस वर्ष को लीपईयर के नाम से जाना जाता है । छः घण्टों से ऊपर के मिनट व सैकण्ड को इसमें समायोजित नहीं करने की भूल तो इसमें भी रह ही गई है । सौ–दोसौ वर्षों में यह भूल लगभग एक दिन की होने से मकर संक्रान्ति की तारीख बदल जाती है । कवि दलपतराम के समय में मकर संक्रान्ति १३ जनवरी को आती थी, आजकल १४ जनवरी को आती है और आने वाले कुछ ही वर्षों में १५ जनवरी को आयेगी । वास्तविकता यह है कि केवल सूर्यगति की गणना से यह गलती ठीक हो ही नहीं सकती ।

यूरोपीय कैलेण्डर की कालगणना केवल सूर्यगति की गणितीय गणना के आधार पर ही है । अरबी (वर्तमान में इस्लामिक) परम्परा में कालगणना केवल चन्द्र गति की गणितीय गणना के आधार पर होती है । और पारसी

परम्परा में कालगणना केवल नक्षत्रों की गति के गणितीय आधार पर होती है ।

यह सारिणी देखें –

कालगणना	यूरोपीय कैलेण्डर	इस्लामिक कैलेण्डर	पारसी कैलेण्डर
किस पर आधारित	सूर्यगति की गणना पर	चन्द्रगति की गणना पर	नक्षत्रगति की गणना पर
वर्ष का प्रकार	सौर वर्ष	चान्द्र वर्ष	नाक्षत्र वर्ष
वर्ष के दिन	लगभग ३६५ १/४	लगभग ३५४	लगभग ३२७ ४/५
महीने का प्रकार	सौर मास	चान्द्र मास	नाक्षत्र मास
महिने के दिन	लगभग ३० १/२	लगभग २९ १/२	लगभग २७ १/४

उपर्युक्त अन्तर के कारण क्रिसमस त्यौहार का इस्लामिक और पारसी व्यवस्था के साथ और पारसियों के नव वर्ष पतेती का यूरोपीय और इस्लामिक व्यवस्था के साथ कभी भी मेल नहीं बैठता ।

भारत वर्ष के आर्ष पुरुषों के स्वयं के दिव्य ज्ञान और स्वयं की परा बुद्धि पर आधारित कालगणना की पद्धतियाँ सम्पूर्ण हैं । परन्तु गूँथी हुई होने के कारण जटिल लगती हैं । जिसमें सूर्य, चन्द्र और नक्षत्रों की गति की गणना परस्पर गूँथी हुई है । इसलिए आर्षपुरुषों ने तीस दिन के कर्ममास की और तीन सौ साठ दिन के कर्मवर्ष की संकल्पना लेकर उसके
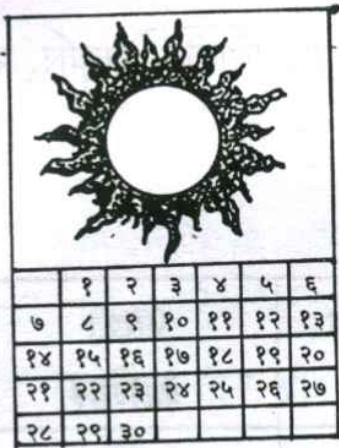
सौर कॅलेन्डर
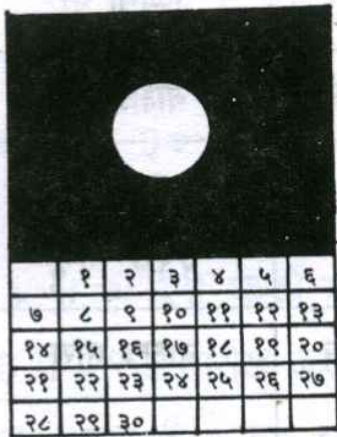
चान्द्र कॅलेन्डर
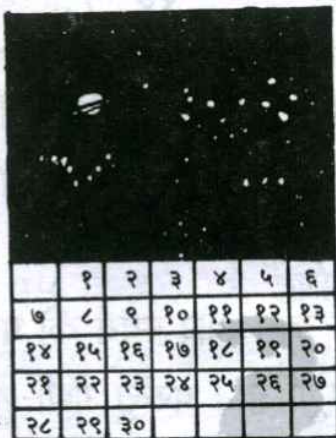
नाक्षत्र कॅलेन्डर

साथ सूर्य, चन्द्र और नक्षत्र के मास-वर्ष का अद्‌भुत पद्धति से परस्पर जोड़ने का काम किया है । आकाशीय पदार्थों की स्थिति - गति की सूक्ष्म जानकारी देना, उनकी सूक्ष्म गणनाएँ करके प्रकृति की व्यवस्थाओं के साथ पूरी तरह ताल से ताल मिलाती हुई कालगणना की परिपूर्ण व्यवस्था भारत वर्ष में अत्यन्त प्राचीन काल से लेकर आज तक चल रही है । कालान्तर में यह व्यवस्था ही 'पंचांग' के रूप में पहचानी जाने लगी । ऐसे जटिल विषयों को समझना जिनके लिए कठिन था, ऐसी विश्व की अल्पबुद्धि प्रजाओं ने भारतीय कालगणना का मात्र एक भाग लेकर ही काम चलाया । किसी ने सूर्य को, किसीने चन्द्र को तो किसी ने केवल नक्षत्र को ही पकड़ा । आज भी उनमें भारतीय कालगणना के मूल तत्त्वों के अवशेष दिखाई देते हैं ।

५ पंचांग
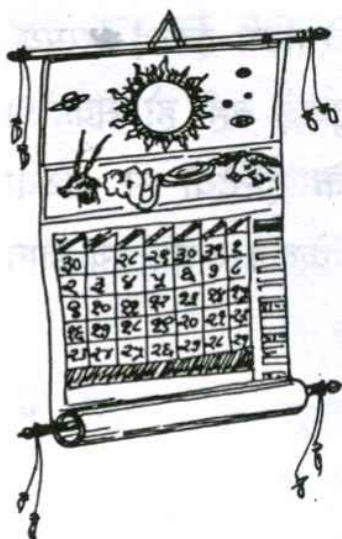
पंच + अंग अर्थात् जिस में पाँच अंग है, वह पंचांग । ये पाँच अंग हैं – तिथि, वार, नक्षत्र, योग और करण । काल को अलग अलग तथा बिल्कुल सही मात्रा में व्यक्त करने के लिए ये पाँचों अंग आवश्यक हैं ।

(१) तिथि का सम्बन्ध चन्द्र गति की गणना पर आधारित है । (२) वार का सम्बन्ध सूर्य गति की गणना पर आधारित है । (३) नक्षत्रों का सम्बन्ध नक्षत्रों की गति की गणना पर आधारित है । (४) योग का सम्बन्ध सूर्य एवं चन्द्र की गति की गणना के मिलान पर आधारित है । (५) करण का सम्बन्ध तिथि के विभागीकरण के साथ है ।

तिथि, वार, नक्षत्र, योग एवं करण इन पाँच अंगों से पंचांग की रचना की जाती है । आजकल तो पंचांग पुस्तकाकार छपता है । इसमें अनेक प्रकार की सारिणियाँ दी हुई होती हैं । पूर्व काल में पंचांग एक छोटी–पतली लकड़ी पर लपेटा हुआ कपड़ा होता था, जिस पर सम्पूर्ण जानकारी अंकित होती थी । जब देखना हो तब उसे खोल कर देखना और फिर से लपेट देना, यह प्रक्रिया चलती थी । यह 'टिपणा' कहलाता था ।

वास्तव में पंचांग में कालगणना सम्बन्धी विशिष्ट जानकारी ही दी हुई होती है । ऐसी लिखित विशिष्ट जानकारी के लिये हमारे यहाँ 'टीप' शब्द है । और ऐसी टीप जिसमें लिखि हुई है उसे 'टीपणा' कहते हैं । मूल संस्कृत शब्द 'टिप्पणी' से यह शब्द अन्य भारतीय भाषाओं में गया है । पंचांग के अतिरिक्त राजा महाराजाओं द्वारा लिखित संदेश भी दूतों के माध्यम से इसी प्रकार लकड़ी पर लिखा हुआ वस्त्र लपेट कर भिजवाये जाते थे ।

पंचांग में मुख्य पाँच अंगों के अतिरिक्त अयन, ऋतु, पक्ष, प्रहर, होरा, चोघड़िया और मुहूर्त जैसे काल के विभाग और सूक्ष्म अंग भी होते हैं ।

६ कालगणना और कालमापन

भारत वर्ष की परम्पराओं में काल की अविभाज्य ईकाई 'समय' है। समय का विभाजन सम्भव नहीं है, इसके टुकड़े नहीं हो सकते। एक समय का नाप इतना अधिक सूक्ष्म है कि इन्द्रियों से अथवा भौतिक साधनों से उसे जाना नहीं जा सकता। केवल अतीन्द्रिय ज्ञान से ही उसे जाना जा सकता है।

१०० त्रुटि	=	१ तत्पर
३० तत्पर	=	१ निमेष
१८ निमेष	=	१ काष्ठा
३० काष्ठा	=	१ कला
३० कला	=	१ घड़ी
२ घड़ी	=	१ मुहूर्त
३० मुहूर्त	=	१ अहोरात्र (दिन और रात)
१५ अहोरात्र	=	१ पक्ष (पखवाड़ा)
२ पक्ष	=	१ महीना
२ महीना	=	१ ऋतु
३ ऋतु	=	१ अयन (छः मास)
२ अयन	=	१ वर्ष
१२ वर्ष	=	१ तप
१०० वर्ष	=	१ शतक अथवा सदी
३० तप	=	३६० वर्ष = १ दिव्य वर्ष

काल की इससे आगे भी गणना की हुई है, परन्तु हमारे लिए अभी इतना ही पर्याप्त है । इनके अतिरिक्त काल के अन्य प्रकार भी हैं । उन्हें भी समझें -

१ प्रहर = सूर्योदय से सूर्यास्त तथा सूर्यास्त से सूर्योदय तक के काल का चौथा भाग ।

१ चौघड़िया = सूर्योदय से सूर्यास्त अथवा सूर्यास्त से सूर्योदय तक के समय का आठवाँ भाग ।

१ होरा = सूर्योदय से सूर्यास्त अथवा सूर्यास्त से सूर्योदय तक के काल का बारहवाँ भाग ।

१ प्रहर = अनुमानतः तीन घंटे, १ चौघड़िया = अनुमानतः डेढ़ घंटा और १ होरा = अनुमानतः १ घंटा होता है । परन्तु ऋतु परिवर्तन के कारण दिन या रात लम्बाई में छोटी या बड़ी होने के आधार पर प्रहर, चौघड़िया और होरा क्रमशः तीन, डेढ़ और १ घण्टे से थोड़ा कम या अधिक - वह भी मिनटों में हो सकता है ।

काल की ईकाई की वर्तमान में प्रचलित माप के साथ में तुलना कीजिए ।

वर्तमान के प्रचलित माप इस प्रकार है ।

१ दिन = २४ घण्टे

१ घण्टा = ६० मिनट

१ मिनट = ६० सैकण्ड

१ सैकण्ड = ६० प्रति सैकण्ड

भारत वर्ष की परम्परा के अनुसार १ दिन (अहोरात्र) के ३० मुहूर्त अथवा ६० घड़ी होती है । इस प्रकार २४ घंटों के ३० मुहूर्त

अथवा ६० घड़ी होती है । इसकी तुलना ऐसे होगी ।

६० घड़ी = २४ घंटे

$२^{१}/_{२}$ घड़ी = १ घण्टा = ६० मिनट

१ घड़ी = २४ मिनट

२ घड़ी = १ मुहूर्त = ४८ मिनट

१ घड़ी की २४ मिनट के आधार पर गिनती करने पर जान सकते हैं कि १ मिनट = २०,२५००० त्रुटि होती है । और १ सैकण्ड में ३३,७५० त्रुटि होगी । देखा, समय का कितना सूक्ष्म नाप है ? सैकण्ड का भी ३३,७५० वाँ भाग है त्रुटि । वास्तव में आश्चर्य में डालने वाली बात है ।

त्रुटि, तत्पर, निमेष आदि काल की सूक्ष्म इकाइयाँ हैं । उसी प्रकार से काल की अन्य इकाइयाँ तथा कालगणना की अन्य विविध पद्धतियों का अस्तित्व भारत वर्ष में अलग अलग समय में, अलग अलग क्षेत्रों और प्रदेशों में और विविध परम्पराओं में था । भारत के प्राचीन ग्रन्थों में इसकी क्रमबद्ध जानकारी दी हुई है ।

७ तिथि

एक तिथि अर्थात् चन्द्र और सूर्य के मध्य बारह अंश का कोणीय अन्तर होने में लगने वाला समय । किसी भी तिथि के पूरी होने में लगने वाला समय सदैव बदलता रहता है । वह कम से कम २० घण्टों का और अधिक से अधिक २७ घण्टों का हो सकता है ।

जब सूर्य और चन्द्र के समय का कोणीय अन्तर शून्य अंश का होता है, तब अमावास्या की तिथि बनती है । अमावास्या शब्द (अमा) साथ (वस्) रहना की सन्धि होने से बना हुआ है । इसका अर्थ है, 'साथ में वसना अर्थात् रहना' । जिस दिन सूर्य और चन्द्र साथ साथ आकाश में चलते हैं, उस दिन को अमावास्या कहते हैं । उसके बाद १२° के अन्तर तक एकम, २४° के अन्तर तक द्वितीया, ३६° के अन्तर तक तृतीया । इसी प्रकार क्रमशः होते होते १६८° से १८०° अन्तर तक पूर्णिमा अथवा पूनम (पन्द्रहवीं तिथि) बनती है । इन पन्द्रह तिथियों के पक्ष को सुद पक्ष अथवा शुक्ल पक्ष कहते हैं । १८० के बाद बारह बारह अंश के अन्तर से फिर से प्रतिपदा, द्वितीया, तृतीया के बाद चौदहवीं तिथि (चतुर्दशी) बनने के बाद ३४८° से ३६०° के अन्तर तक अमावास्या तिथि बनती है । वास्तव में ३६०° तक का अन्तर होने पर एकम से अमावास्या तक की पन्द्रह तिथियों के पक्ष को वद पक्ष अथवा कृष्ण पक्ष कहते हैं ।

चन्द्रमा की कुल सोलह कलाएँ होती हैं । उनमें से एक कला हमेशा खुली रहती है । अमावास्या के समय में चन्द्रमा की १५ कलाएँ ढकी हुई रहती है । शुक्ल पक्ष में एक एक तिथि में चनद्रमा की एक एक कला खुलती जाती है । और पूर्णिमा को सोलह कलाएँ

खुली होती हैं । और अमावास्या को सोलह में से पन्द्रह कलाएँ ढक जाती हैं, केवल एक ही कला खुली रहती है ।

सूर्योदय के साथ एक तिथि प्रारम्भ होती है और दूसरे दिन सूर्योदय के साथ दूसरी तिथि प्रारम्भ हो जाती है, ऐसा नहीं होता । कोई भी तिथि दिन में या रात्रि में किसी भी समय प्रारम्भ हो सकती है । तथा किसी भी समय पूरी भी हो सकती है । इसलिए चन्द्रमा हमेशा रात को ही आकाश में दिखाई देता है, ऐसा कोई नियम नहीं है । मुख्य रूप से पूर्णिमा की रात्रि को चन्द्रमा आकाश में होता है और अमावास्या के दिन चन्द्रमा सूर्य के साथ साथ चलता रहने से चन्द्रमा की एक कला खुली होते हुए भी सूर्य के निकट होने से सूर्य के तेज के कारण दिन में दिखाई नहीं देता । और अमावास्या की रात्रि में चन्द्रमा आकाश में होता ही नहीं ।

शुक्ल पक्ष की अष्टमी से त्रयोदशी के दिनों में शाम को चार बजे से सूर्यास्त तक की अवधि में पूर्व दिशा के आकाश में और कृष्ण पक्ष की तिथियों के दिनों में सूर्योदय से प्रातः ६ बजे तक आप चन्द्रमा को पश्चिम दिशा में आकाश में देख सकते हैं ।

शुक्ल पक्ष की अष्टमी को चन्द्रमा आकाश में लगभग मध्य रात्रि तक दिखाई देता है । मध्यरात्रि को चन्द्रास्त होने से वह मध्य रात्रि के बाद आकाश में नहीं दीखता । इसके विपरीत कृष्ण पक्ष की अष्टमी को चन्द्रमा आकाश में लगभग मध्यरात्रि तक नहीं दीखता और मध्य रात्रि के बाद चन्द्रोदय होता है और चन्द्रमा लगभग सिर के ऊपर आता है तब तक सूर्योदय हो जाता है । इस से यह समझ में आता है कि तिथि की गणना का चन्द्रमा के उदय-अस्त के साथ सम्बन्ध नहीं है ।

कोई भी तिथि शुरु होने का समय चाहे जो हो परन्तु सूर्योदय

शुक्ल द्वितीया

शुक्ल अष्टमी

पूर्णिमा

के समय जो तिथि होती है, वही तिथि उस दिन की तिथि है ÷और सूर्योदय होने के दो तीन घण्टों बाद ही अष्टमी पूरी होकर नवमी शुरू हो जाती हो तब भी उस पूरे दिन (अहोरात्र) अष्टमी तिथि ही गिनी जाती है । जब किसी तिथि का समय २४ घण्टों से अधिक होता है, तब कभी यह स्थिति बनती है कि यह तिथि दोनों दिन सूर्योदय के समय होती है तब दोनों ही दिन यही तिथि गिनी जाती है । उदाहरण के लिये शुक्ल एकादशी आज सूर्योदय से पहले शुरु हुई और दूसरे दिन सूर्योदय के बाद पूरी हुई, तो दोनों दिन एकादशी ही गिनी जाती है । तिथि में वृद्धि होने से यह वृद्धि तिथि कहलाती है । इसके विपरीत जब किसी तिथि का समय २४ घण्टों से कम होता है तब कभी कभी ऐसी स्थिति बनती है कि एक तिथि दो सूर्योदय के बीच में आ जाती है । तब इस तिथि की गिनती नहीं होती । उदाहरण के लिए कृष्ण पक्ष की पंचमी तिथि सूर्योदय के बाद शुरु हुई और दूसरे दिन सूर्योदय से पहले ही पूरी हो गई तो ऐसे समय इसकी गिनती न कर चतुर्थी के बाद सीधे षष्ठी तिथि गिनी जाती है । इसे पंचमी तिथि का क्षय होना कहा जाता है ।

कृष्ण चतुर्दशी

कृष्ण अष्टमी

कृष्ण द्वितीया

तिथियों के नाम, काल और अंश

तिथि का क्रम	पक्ष	तिथि का नाम	सूर्यचन्द्र के मध्य का कोणीय अन्तर अंश में	खुली कला
३०	कृष्ण	अमावास्या – अमावस	०	१
१	शुक्ल	प्रतिपदा – एकम	० से १२	२
२	शुक्ल	द्वितीया – दूज	१२ से २४	३
३	शुक्ल	तृतीया – तीज	२४ से ३६	४
४	शुक्ल	चतुर्थी – चौथ	३६ से ४८	५
५	शुक्ल	पंचमी – पाँचम	४८ से ६०	६
६	शुक्ल	षष्ठी – छठ	६० से ७२	७
७	शुक्ल	सप्तमी – सातम	७२ से ८४	८
८	शुक्ल	अष्टमी – आठम	८४ से ९६	९
९	शुक्ल	नवमी – नोम	९६ से १०८	१०
१०	शुक्ल	दशमी – दशम	१०८ से १२०	११
११	शुक्ल	एकादशी – ग्यारस	१२० से १३२	१२
१२	शुक्ल	द्वादशी – बारस	१३२ से १४४	१३
१३	शुक्ल	त्रयोदशी – तेरस	१४४ से १५६	१४
१४	शुक्ल	चतुर्दशी – चौदश	१५६ से १६८	१५
१५	शुक्ल	पूर्णिमा – पूनम	१६८ से १८०	१६

तिथि का क्रम	पक्ष	तिथि का नाम	सूर्यचन्द्र के मध्य का कोणीय अन्तर अंश में	खुली कला
१	कृष्ण	प्रतिपदा - एकम	१८० से १९२	१५
२	कृष्ण	द्वितीया - दूज	१९२ से २०४	१४
३	कृष्ण	तृतीया - तीज	२०४ से २१६	१३
४	कृष्ण	चतुर्थी - चौथ	२१६ से २२८	१२
५	कृष्ण	पंचमी - पाँचम	२२८ से २४०	११
६	कृष्ण	षष्ठी - षठ	२४० से २५२	१०
७	कृष्ण	सप्तमी - सातम	२५२ से २६४	९
८	कृष्ण	अष्टमी- आठम	२६४ से २७६	८
९	कृष्ण	नवमी - नम	२७६ से २८८	७
१०	कृष्ण	दशमी - दशम	२८८ से ३००	६
११	कृष्ण	एकादशी - ग्यारश	३०० से ३१२	५
१२	कृष्ण	द्वादशी - बारस	३१२ से ३२४	४
१३	कृष्ण	त्रयोदशी - तेरस	३२४ से ३३६	३
१४	कृष्ण	चतुर्दशी - चौदश	३३६ से ३४८	२
३०	कृष्ण	अमावास्या - अमावस	३४८ से ३६० = ०°	१

बीज के चन्द्र का दर्शन

विश्व की अन्य परम्पराओं में और भारत वर्ष की परम्परा में शुक्ल पक्ष की द्वितीया के दिन चन्द्र दर्शन करने का विशेष महत्त्व है । तिथि की वृद्धिक्षय की प्राकृतिक व्यवस्था के कारण चान्द्रमास के दिनों की संख्या तीस अथवा तीस से कम हो सकती है । तीस से अधिक नहीं हो सकती । परन्तु चान्द्र वर्ष के दिनों की संख्या कम अधिक होती है । प्रत्येक चान्द्र वर्ष में वृद्धि तिथियों की संख्या से क्षय तिथियों की संख्या छः (६) अधिक होती है । बारह मास की कुल १२ x ३० = ३६० तिथियों में से छः (६) तिथियाँ क्षय हो जाने से चान्द्रवर्ष ३५४ दिन का ही होता है । यह प्रकृति के अनुरूप बनी हुई व्यवस्था है ।

वार = सौरदिन
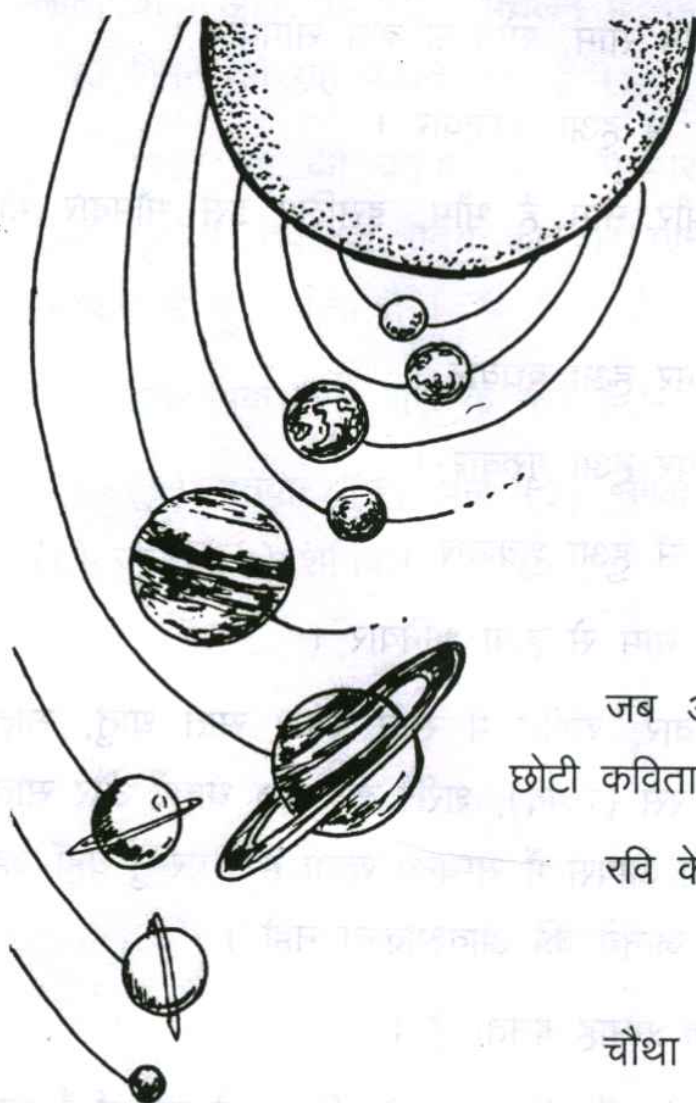
जब आप छोटे थे तब एक छोटी कविता बोलते थे ×

रवि के बाद सोम है,
तीसरा मंगलवार ।
चौथा बुध गुरु पाँचवाँ,
छठ्ठा शुक्रवार ।
शनिवार है सातवाँ,
अन्तिम वार गिनाय ।
ऐसे एक सप्ताह में,
सात वार हो जाय ।

सातों वारों का सम्बन्ध सात ग्रहों के साथ है ।

सूर्य का दूसरा नाम रवि, रवि से बना रविवार ।

चन्द्र का दूसरा नाम सोम, सोम से बना सोमवार ।

मंगल ग्रह के नाम से हुआ मंगलवार ।

मंगल का एक और नाम है भौम, इसलिए इसे भौमवार भी कहते हैं ।

बुध ग्रह के नाम पर हुआ बुधवार ।

गुरु ग्रह के नाम पर हुआ गुरुवार ।

शुक्र ग्रह के नाम से हुआ शुक्रवार ।

और शनि ग्रह के नाम से हुआ शनिवार ।

सात ग्रह, सात वार, संगीत में सात स्वर, सात धातु, सात रत्न, सात धान्य, सात रस (स्वाद), शरीर की सात धातुएँ और सात विद्याएँ आदि का सब का आपस में सम्बन्ध रहता है । परन्तु यहाँ यह विषय हमें और अधिक जानने की आवश्यकता नहीं ।

सात वार का एक सप्ताह बनता है ।

एक वार अर्थात् एक सौर दिवस । सौर दिवस से तात्पर्य है एक अहोरात्र (दिन और रात) का समय, या चौबीस घण्टों का समय । परन्तु वार गिनने की तीन अलग अलग पद्धतियाँ विश्व में प्रचलित हैं । उसका एक कारण अलग अलग भौगोलिक स्थितियाँ हैं ।

इस्लाम में एक सूर्यास्त से दूसरे सूर्यास्त तक के समय को वार माना जाता है । इनका वार रात्रि में शुरु होता है ।

हमारे देश में वेदों की एक शाखा माध्यन्दिन शाखा है । उसमें दिन का काल एक मध्याह्न दिवस से दूसरे मध्याह्न दिवस तक गिना जाता था । आज यह पद्धति प्रचलन में नहीं है । परन्तु सौर दिन का समय गिनने की यह पद्धति सही है ।

भारत वर्ष की वर्तमान सभी परम्पराओं में प्रातः सूर्योदय से दूसरे सूर्योदय तक के समय को वार माना जाता है । हमारा वार सूर्योदय से शुरू होता है ।

इस्लामिक सात वारों के नाम हैं –

(१) इतवार (२) पीर (३) मंगल (४) बुध (५) जुमेरात (६) जुम्मा (७) शनिवार ।

९ नक्षत्र

सूर्य और चन्द्र जिस आकाशीय वृत्ताकार (वर्तुलाकार) मार्ग से गति करते हैं, उस वर्तुल के एक समान २७ विभाग की संकल्पना है। जैसे साईकिल के पहिये में आरे लगे होते हैं, ठीक उसी प्रकार की यह रचना है । यह प्रत्येक विभाग नक्षत्र का विभाग कहलाता है । आकाश में तारों के अनेक समूह हैं । इन समूहों अथवा गुच्छों में आने वाले तारों की स्थिति के कारण प्रत्येक गुच्छे की एक बिशेष आकृति बनी हुई है । ऊपर बताये हुए नक्षत्रों के २७ विभागों में प्रत्येक ऐसा एक एक तारों का समूह अथवा तारों का विशिष्ट आकारवाला गुच्छा प्राकृतिक रूप से ही वैसी आकृति बनाये हुए है । इन २७–२८ तारकजूथों के तारे कभी भी नष्ट नहीं होते । कुछ आकाश में ही नष्ट होकर गिर जाने वाले तारों जैसे पदार्थों को उल्का कहते हैं । परन्तु नक्षत्र विभागों के तारे कभी गिरते नहीं हैं। गिर जाने की क्रिया के लिए संस्कृत में ÷क्षरण होना' शब्द है । जो कभी भी गिरने वाले नहीं, उनके लिए नक्षत्र शब्द है । ÷नक्षत्र' शब्द की संस्कृत व्याख्या है, ÷न क्षरति इति नक्षत्र' । जो गिरने वाले नहीं हैं, और स्थिर प्रकृति के हैं, वे नक्षत्र हैं । ऐसे ये २७ तारक समूह ही नक्षत्र कहलाते हैं । अन्य तारक समूहों को नक्षत्र नहीं कहते । सूर्य या चन्द्र जब जिस नक्षत्र विभाग में होते हैं या उनमें से हकर गुजरते हैं तब सूर्य या चन्द्र उस नक्षत्र में है, ऐसा कहा जाता है । लक्षणा में आज सूर्य या चान्द्र का नक्षत्र अमुक अमुक है , ऐसा भी कहा जाता है । इसलिए जब यह कहा जाता है कि आज सूर्य या चन्द्र का नक्षत्र अमुक है, तब इसका अर्थ यह होगा कि सूर्य या चन्द्र आज उस नक्षत्र विभाग में हैं और

उस नक्षत्र विभाग में से उनका गति करना चल रहा है । पंचांग में जिस दिन चन्द्रमा के नक्षत्र का नाम लिखा होता है, चन्द्रमा उस दिन उस नक्षत्र में विचरण करता है ।

वर्तुल के ३६० अंश होने से एक समान २७ नक्षत्र विभागों में से प्रत्येक नक्षत्र विभाग १३ अंश और २० कला का होता है । १ अंश = ६० कला और १ कला = ६० विकला का माप है । ३६०° को २७ से भाग देने पर प्रत्येक भाग में १३° आते हैं और ८° शेष बच जाते हैं । इस ८° को ६० से गुणा करने पर ५४० कला आती हैं । इन ५४० कला में २७ का भाग देने पर प्रत्येक भाग में २० - २० कलाएँ आती हैं । इस प्रकार प्रत्येक नक्षत्र १३ अंश और २० कला का होता है ।

चन्द्रमा को प्रत्येक नक्षत्र में से गुजरने में २७ दिन ७ घण्टे ४३ मिनट और ११$^{१}/_{२}$ सेकण्ड का समय लगता है । जबकि सूर्य को प्रत्येक नक्षत्र में से गुजरने में प्रथम १३ नक्षत्रों में १३ - १३ दिन और पिछले १४ नक्षत्रों में १४-१४ दिनों का समय लगता है । नक्षत्र में सूर्य अथवा चन्द्र के गुजरने के अथवा रहने के समय को सूर्य का नक्षत्र भोगकाल अथवा चन्द्र का नक्षत्र भोगकाल कहते हैं ।

नक्षत्र के तारक समूहों में तारों की संख्या बराबर नहीं होती । अपितु तारों की स्थिति से बनने वाली आकृतियों में भी भिन्नता होती है । २७ में से १२ नक्षत्रों के नामों से १२ महीनों के नाम निश्चित किये हुए हैं । इसके अतिरिक्त नक्षत्रों के अपने गुणधर्म के अनुसार उनकी अपनी फल देने की स्थिति के आधार पर विभिन्न प्रकार बनाये गये हैं । यह सम्पूर्ण जानकारी यहाँ एकसाथ नीचे की सारिणी में देख सकते हैं ।

क्रम	नक्षत्र नाम	तारों की संख्या	आकृति	महीने का नाम	गुणधर्म का प्रकार	फलस्थिति का प्रकार
१	अश्विनी	३	घोडा	आश्विन	क्षिप्र	तिर्यकमुखी
२	भरणी	३	त्रिकोण	–	क्रूर-उग्र	अधोमुखी
३	कृत्तिका	६	अस्तरा अग्निज्वाला	कार्तिक	मिश्र सामान्य	अधोमुखी
४	रोहिणी	५	बैलगाड़ी	–	स्थिर	उर्ध्वमुखी
५	मृगशीर्ष	५	हरिण का मस्तक	मार्गशीर्ष	सौम्य-मृदु	तिर्यकमुखी
६	आर्द्रा	१	उजला रंग	–	तीक्ष्ण	उर्ध्वमुखी
७	पुनर्वसु	५ या ६	धनुष या घर	–	चर	तिर्यकमुखी
८	पुष्य	१ या ३	माणिक जैसा रंग	पौष	तीक्ष्ण	–

क्रम	नक्षत्र नाम	तारों की संख्या	आकृति	महीने का नाम	गुणधर्म का प्रकार	फलस्थिति का प्रकार
९	आश्लेषा	५	श्वान पुच्छ या कुम्हार का चाक	-	तीक्ष्ण	-
१०	मघा	५	हल	माघ	क्रूर - उग्र	अधोमुखी
११	पूर्वा फाल्गुनी	२	खाट	-	क्रूर - उग्र	अधोमुखी
१२	उत्तरा फाल्गुनी	२	बिस्तर	फाल्गुन	स्थिर	उर्ध्वमुखी
१३	हस्त	५	हाथ - पंजा	-	क्षिप्र	तिर्यकमुखी
१४	चित्रा	१	मोती	चैत्र	सौम्य - मृदु	तिर्यकमुखी
१५	स्वाति	१	कुंकुम जैसा रंग	-	चर	तिर्यकमुखी
१६	विशाखा	५ या ६	तोरण	वैशाख	मिश्र - सामान्य	अधोमुखी
१७	अनुराधा	७	जलधारा	-	सौम्य - मृदु	तिर्यकमुखी
१८	ज्येष्ठा	३	साँप की कुंडली	ज्येष्ठ	तीक्ष्ण	तिर्यकमुखी

क्रम	नक्षत्र नाम	तारों की संख्या	आकृति	महीने का नाम	गुणधर्म का प्रकार	फलस्थिति का प्रकार
१९	मूल	९ या ११	बिच्छू या सिंह पूँछ	-	तीक्ष्ण	अधोमुखी
२०	पूर्वाषाढ़ा	४	हाथी दाँत	आषाढ़	क्रूर-उग्र	अधोमुखी
२१	उत्तराषाढ़ा	४	सूप	-	स्थिर	उर्ध्वमुखी
२२	श्रवण	३	बाण या त्रिशूल	श्रावण	चर	उर्ध्वमुखी
२३	धनिष्ठा	५	ढोल	-	चर	उर्ध्वमुखी
२४	शतभिषा या शत तारका	१००	वर्तुल	-	चर	उर्ध्वमुखी
२५	पूर्वा भाद्रपदा	२	घण्टा	भाद्रपद	क्रूर-उग्र	अधोमुखी
२६	उत्तरा भाद्रपदा	२	दो मस्तक	-	स्थिर	उर्ध्वमुखी
२७	रेवती	३२	मछली या मृदंग	-	सौम्य-मृदु	तिर्यकमुखी
२८	अभिजित	-	-	-	क्षिप्र	-

१० राशिचक्र

अब हम राशि चक्र की बात करेंगे । जिस प्रकार आकाशीय वर्तुल के २७ विभाग तथा २७ नक्षत्र हैं, उसी प्रकार से आकाशीय वर्तुल के ३०-३० अंश के बारह विभागों की संकल्पना भी की गई है । उस प्रत्येक विभाग को राशि कहते हैं । अगर २७ को १२ से भाग दें तो २$^{१}/_{४}$ (सवा दो) होते हैं । समझने के लिए ऐसा कह सकते हैं कि प्रत्येक राशि में सवा दो नक्षत्र आते हैं । इसलिए प्रत्येक राशि में किसी एक नक्षत्र का चौथा भाग, आधा भाग या पौन भाग भी आयेगा । इस प्रकार की गणना के लिए प्रत्येक नक्षत्र को चार चरणों में विभाजित किया गया है । जैसे अश्विनी नक्षत्र के चार चरणों की गणना करते हैं तो प्रथम चरण में अश्विनी का पहला चौथाई भाग ($^{१}/_{४}$) आता है, दूसरे चरण में उसका दूसरा चौथाई भाग ($^{१}/_{४}$), तीसरे चरण में उसका तीसरा चौथाई भाग ($^{१}/_{४}$) और चौथे चरण में उसका अन्तिम चौथाई भाग ($^{१}/_{४}$) गिना जाता है । ऐसा करने से प्रत्येक राशि में कौन से नक्षत्र पूरे आते हैं और कौन से नक्षत्र का कौनसा चरण है यह जानने से स्पष्टता पूर्वक समझ सकते हैं कि उस उस राशि में किस नक्षत्र का अगला या पिछला ऐसा कौन सा भाग है । २७ नक्षत्रों के कुल १०८ चरण हैं ।

प्रत्येक राशि में रहने वाले तारों से विशेष आकृतियाँ बनती हैं । प्रत्येक राशि के साथ वर्णमाला

मेष

वृषभ

मिथुन

कर्क

सिंह

कन्या

के निश्चित वर्णाक्षर जोड़े हुए हैं । इन वर्णाक्षरों के आधार पर ही व्यक्ति का नाम रखा जाता है । बालक के जन्म के समय चन्द्रमा जिस राशि में होता है, वह राशि नये जन्मे हुए बालक की जन्म राशि होती है । और उस राशि के वर्णाक्षरों में से ही किसी अक्षर से प्रारम्भ होने वाला नाम रखा जाता है । उदाहरण के लिए जातक की जन्मराशि कुंभ है, तो कुंभ राशि के वर्णाक्षर ग, श, ष, स, ज्ञ में से किसी भी एक अक्षर से नाम प्रारम्भ होता है । जैसे गणपत, शंकर, सोमचन्द, ज्ञानचन्द या गीता, सीता, शान्ति आदि ।

१२ राशियों के नाम क्रम, आकृति, वर्ण तथा किस किस नक्षत्र के कौन कौन से चरण उस राशि में आते हैं, वह सारिणी में देखिए ।

राशि के वर्णाक्षरों की भाँति ही २७ नक्षत्रों के कुल १०८ चरणों में प्रत्येक चरण के लिए आ की मात्रा वाला एक एक अक्षर निश्चित किया हुआ है । जातक का जन्म जिस राशि के जिस नक्षत्र तथा जिस चरण में हुआ है, उस चरण के वर्णाक्षर पर ही जातक का नाम रखने की विशेष पद्धति अपनाई जाती है । यहाँ हम इस विषय में अधिक गहराई में नहीं जायेंगे ।

राशि का उपयोग जन्म कुण्डली या जन्मपत्रिका बनाने में तथा भविष्यकथन में होता है । राशियों के भी वर्ण, तत्त्व और वर्ग आदि विविध प्रकार बनाये गये हैं ।

तुला

वृश्चिक
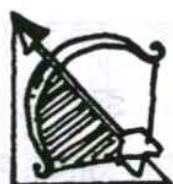
धनु

मकर

कुम्भ

मीन

क्रम	राशि	आकृति	वर्णाक्षर	नक्षत्र एवं उनके चरण (जिन नक्षत्रों के चरण नहीं लिखे हैं, वह सम्पूर्ण इसमें है, ऐसा समझना है।)
१	मेष	भेड़	अ, ल, इ	अश्विनी, भरणी तथा कृत्तिका का प्रथम चरण
२	वृषभ	बैल	ब, व, उ	कृतिका का २,३,४ चरण, रोहिणी तथा मृगशीर्ष के १, २ चरण
३	मिथुन	युगल	क, छ, घ, क्ष	मृगशीर्ष के ३, ४ चरण, आर्द्रा, पुनर्वसु के १,२,३ चरण
४	कर्क	केकड़ा	ह, ड	पुनर्वसु का चौथा चरण, पुष्य, अश्लेषा
५	सिंह	शेर	म, ट	मघा, पूर्वाफाल्गुनी, उत्तराफाल्गुनी का प्रथम चरण
६	कन्या	कन्या	प, ठ, ण	उत्तरा फाल्गुनी का २,३,४ चरण, हस्त, चित्रा के १,२ चरण
७	तुला	तराजु	र, त	चित्रा के ३,४ चरण, स्वाति, विशाखा के १,२,३ चरण
८	वृश्चिक	बिच्छु	न, य	विशाखा का चौथा चरण, अनुराधा, ज्येष्ठा
९	धन	धनुष	ध, फ, ढ, भ	मूल, पूर्वाषाढ़ा, उत्तराषाढ़ा का प्रथम चरण
१०	मकर	मगरमच्छ	ख, ज	उत्तराषाढ़ा के २, ३, ४ चरण, श्रवण, धनिष्ठा के १,२ चरण
११	कुंभ	घड़ा	ग, श, ष, स, ज्ञ	धनिष्ठा के ३,४ चरण, शतशिषा, पूर्वाभाद्रपदा के १,२,३ चरण
१२	मीन	मछली	द, च, झ, थ	पूर्वाभाद्रपदा का चौथा चरण, उत्तरा भाद्रपदा तथा रेवती

११ योग

सूर्य और चन्द्र किसी निश्चित समय में आकाशीय वर्तुलमार्ग (क्रान्तिवृत्त) के आरम्भ स्थान से जितने अंश के अन्तर में हों, उन दोनों के अंशों को जोड़ कर उसमें १३ अंश २० कला का भाग देने से प्राप्त संख्या अगर ७ और ८ के मध्य हो तो आठवाँ योग चलता है । अगर संख्या ८ या ९ के मध्य हो तो नौवाँ योग चलता है । इस प्रकार निर्णय किया जाता है कि कौनसा योग चल रहा है । प्रत्येक योग का माप १२ अंश ३० कला का है और कुल योग २७ है । योग का समय बदलता रहता है, और सूर्य-चन्द्र की गति के अन्तर के कारण से किसी भी योग का समय कम से कम २० घण्टों का और अधिक से अधिक २५ घण्टों का होता है ।

मुहूर्त शास्त्र में योगों का विशेष उपयोग है । दिन शुद्धि एवं विशेष कार्यों के लिये कुछ योग अनिवार्य माने जाते हैं जबकि कुछ विपरीत योग अशुभ माने जाते हैं । २७ योगों के नाम क्रमशः इस प्रकार हैं -

(१) विष्कंभ	(२) प्रीति	(३) आयुष्यमान	(४) सौभाग्य
(५) शोभन	(६) अतिगण्ड	(७) सुकर्मा	(८) धृति
(९) शूल	(१०) गण्ड	(११) वृद्धि	(१२) ध्रुव
(१३) व्याघात	(१४) हर्षण	(१५) वज्र	(१६) सिद्धि
(१७) व्यतिपात	(१८) वरीयान	(१९) परीघ	(२०) शिव
(२१) सिद्धि	(२२) साध्य	(२३) शुभ	(२४) शुक्ल
(२५) ब्रह्म	(२६) ऐन्द्र	(२७) वैधृति	

१२ करण

तिथि, वार, नक्षत्र और योग इन चारों अंगों के बाद में पंचांग का पाँचवाँ और अन्तिम अंग है, 'करण' । चन्द्र और सूर्य के मध्य ६ अंश का अन्तर पड़ने के लिये जितना समय लगता है, उतने समय को करण कहते हैं । एक तिथि के समय में दो करण होते हैं, इसलिए करण को आधी तिथि भी कह सकते हैं । करण कुल ११ हैं, उनमें भी सात करण चर हैं और चार करण स्थिर हैं ।

बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर, वणिज और विष्टि (भद्रा) ये सात करण चर (अस्थिर) हैं ।

शकुनि, चतुष्पद, नाग और किंस्तुघ्न ये चार करण स्थिर हैं । शुक्ल और कृष्ण पक्ष की १५-१५ तिथियों में आने वाले करणों की सारिणी आगे दी हुई है ।

विष्टि (भद्रा), शकुनि, चतुष्पद, नाग और किंस्तुघ्न ये पाँचों करण अशुभ हैं तथा श्रेष्ठ कार्यों में वर्जित हैं । इन करणों के समय शुभ कार्य नहीं करने चाहिए ।

बव, बालव, कौलव, तैतिल, गर और वणिज ये छः करण शुभ हैं ।

शुक्ल और कृष्ण पक्ष की १५-१५ तिथियों में आने वाले करणों को नीचे सारिणी में दर्शाया गया है ।

शुक्ल पक्ष			कृष्ण पक्ष		
तिथि	प्रथम करण	द्वितीय करण	तिथि	प्रथम करण	द्वितीय करण
१	किंस्तुघ्न	बव	१	बालव	कौलव
२	बालव	कौलव	२	तैतिल	गर
३	तैतिल	गर	३	वणिज	विष्टि
४	वणिज	विष्टि	४	बव	बालव
५	बव	बालव	५	कौलव	तैतिल
६	कौलव	तैतिल	६	गर	वणिज
७	गर	वणिज	७	विष्टि	बव
८	विष्टि	बव	८	बालव	कौलव
९	बालव	कौलव	९	तैतिल	गर
१०	तैतिल	गर	१०	वणिज	विष्टि
११	वणिज	विष्टी	११	बव	बालव
१२	बव	बालव	१२	कौलव	तैतिल
१३	कौलव	तैतिल	१३	गर	वणिज
१४	गर	वणिज	१४	विष्टि	शकुनि
१५	विष्टि	शकुनि	१५	चतुष्पद	नाग

पुनरुत्थान ट्रस्ट

- पुनरुत्थान ट्रस्ट शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत संस्था है ।
- भारतीय जीवनदृष्टि पर आधारित सामान्यप्रवाह के पाठ्यक्रम तैयार करना, उनका प्रयोग करना, शिक्षा में मूलगत अनुसन्धान करना, पुस्तक और अन्य सामग्री का निर्माण एवं प्रकाशन करना, समाजप्रबोधन के कार्यक्रम करना पुनरुत्थान ट्रस्ट के कार्य के विभिन्न आयाम हैं ।
- पुनरुत्थान ट्रस्ट में अभी (वर्ष २००८) तक २५ अनुवाद, १० मौलिक पुस्तकें, १ डीवीडी, १ चार्ट प्रकाशित हुए हैं ।
- पुनरुत्थान ट्रस्ट की 'चिति' नामक अर्धवार्षिक शोधपत्रिका और 'पुनरुत्थान सन्देश' नामक मासिक पत्रिका (हिन्दी एवं गुजराती) प्रकाशित होती है ।
- भारतीय शिक्षा विषयक एक सन्दर्भ पुस्तकालय तैयार करने की पुनरुत्थान ट्रस्ट की योजना है ।

पुण्यभूमि भारत संस्कृति वाचनमाला

- इस वाचनमाला में १०० पुस्तिकाओं का समावेश हुआ है ।
- ये पुस्तिकायें ५ से १२ वर्ष की आयु के छात्रों के लिये बनी हैं । विषय और विषयवस्तु को देखते हुए ये बडों के लिये भी उतनी ही पठनीय होंगी ।
- इन १०० पुस्तिकाओं के तीन विभाग हैं । प्रथम विभाग की ३० पुस्तिकायें ५–७ वर्ष की आयु के, द्वितीय विभाग की ४० पुस्तिकायें ८–९ वर्ष की आयु के और तृतीय विभाग की ३० पुस्तिकायें १०–१२ वर्ष की आयु के छात्रों के लिये हैं ।
- ये पुस्तिकायें एक साथ चार भाषाओं में प्रकाशित हो रही हैं । चार भाषाएँ हैं गुजराती, मराठी, हिन्दी और अंग्रेजी ।
- भारतीय जीवनदृष्टि का आधार लेकर वर्तमान वैश्विक परिप्रेक्ष्य में उचित मानस तैयार करने की दृष्टि से इन पुस्तिकाओं की रचना हुई है ।
- इस आयु के छात्रों को होनी चाहिये ऐसी सभी विषयों की जानकारी इन पुस्तिकाओं में देने का प्रयास किया गया है ।
- ये पुस्तिकायें मनोरंजन हेतु नहीं अपितु ज्ञान और संस्कार हेतु हैं ।
- इनकी शैली और भाषा इस आयु के छात्रों की क्षमता और प्रवृत्ति के अनुरूप रोचक और सरल रखने का प्रयास किया गया है ।

इस पुस्तिका के प्रथम प्रकाशन हेतु रु. २०००/–
पिताश्री श्री गोविंदराव शेणोय एवं मातोश्री शांताबाई की पुण्यस्मृति में
श्री एम. जगन्नाथ शेणोय की ओर से प्राप्त हुए हैं ।